पालवा

भालचंद्र जोशी

पालवा

बिन्नू ने आँखें खोलकर देखा, घर में सभी लोग सो रहे हैं। दोपहर के सन्नाटे में गली भी बेआवाज सोई पड़ी है। बिन्नू को दोपहर में सोना जरा भी अच्छा नहीं लगता है

लेकिन माँ और दादी घर के काम निबटाकर सोती हैं तो उसे भी जबरन सुलाया जाता है। सभी कहते हैं, सात बरस का इतना छोटा बच्चा धूप में अकेले बाहर नहीं जा सकता है। आगे का कमरा जो बैठक कहलाता है उसमें दादाजी सो रहे हैं। वहाँ जाने का तो कोई मतलब नहीं है। रसोईघर का दरवाजा बंद है। महरी काम करके जा चुकी है।

बिन्नू धीरे से उठा और देखने लगा कि माँ और दादी को उसके उठने का पता तो नहीं चला है? गोबर लिपे कमरे में माँ और दादी एक पुरानी-सी दरी बिछाकर सो रही हैं। नींद में दादी का मुँह किसी अजान अचरज में हल्के-से खुला है और माँ दूसरी ओर करवट लेकर सिमटी हुई सोई है। बिन्नू सोचने लगा, माँ और दादी का मुँह किसी अजान अचरज से खुला रहता है या 'हे भगवान!' कहकर डर से बंद हो जाता है। इन घर की औरतों को सोने के बाद भी अचरज और डर से छुटकारा नहीं है। उधर भगवानजी को तो इसकी खबर भी नहीं है। बिन्नू सोचने लगा, माँ सोते हुए भी इतना डरती क्यों है? पैर फैलाकर सोने में क्या डर? उसने एकबार माँ से पूछा भी था तो माँ ने हँसकर कहा था, - "बहू को ऐसे ही रहना चाहिए। नींद में भी भूलना नहीं चाहिए कि वह बहू है।" फिर वह हँस दी थी। बिन्नू ने सोचा था, जबकि यह तो हँसने की बात ही नहीं है। उसने पूछा भी था कि, - "फिर रेखा बुआ इस तरह क्यों नहीं सोती है? वह तो पैर फैलाकर और पलंग पर सोती है, तुम नीचे जमीन पर क्यों?"

जवाब में फिर वही हँसी और वही जवाब, - "रेखा बुआ घर की बेटी हैं और मैं बहू। बहू को ऐसे ही रहना चाहिए।"

बिन्नू को अब माँ के इस जवाब और इस हँसी पर खीझ आती है। लेकिन माँ हमेशा ही ऐसी निस्वाद हँसी नहीं हँसती है। कई बार जब घर में अकेली होती है तो उसकी हर बात पर खुलकर हँसती है। तीज-त्यौहारों पर, खासकर 'हरतालिका' के दिन रतजगे में जब ढोलक पर गाती है या बातें करते हुए हँसती है तो उसकी हँसी एकदम चाँदी जैसी हो जाती है। दादी ही नहीं, दादाजी भी गर्व से कहते हैं कि गाँव में है किसी के पास ऐसी सुंदर बहू? बिन्नू को यह सुनकर अच्छा लगता है। पहले घर में जब नया ट्रैक्टर आया था तब भी सभी ने ऐसा ही कहा था।

बिन्नू बैठक का दरवाजा खोलकर बाहर आँगन में आ गया। कोने में काली कुतिया पैरों को पेट से लगाए सिकुड़ी हुई सो रही है। बिल्कुल माँ की तरह। अब यह काली कुतिया किस घर की बहू है भला! बिन्नू ने सोचा।

बिन्नू निःशब्द आँगन में आया था लेकिन कुतिया को उसके आने की आहट मिल गई। उसने सिर को थोड़ा-सा उठाकर देखा और फिर सो गई। सभी को सोने की पड़ी है!

कमाल है! बिन्नू ने अचरज से सोचा। यह कुतिया उनकी पाली हुई नहीं है। अक्सर गाँव में घूमती रहती है, लेकिन दोपहर और रात को उनके घर आ जाती है। दरवाजा खुला हुआ मिल गया तो आँगन में, नहीं तो दरवाजे के बाहर सो जाती है।

अधखुले दरवाजे से उसने बाहर देखा। जो दृश्य उसे दिखाई दिया, वह दृश्य गाँव और बिन्नू के लिए कोई नया नहीं था। लगभग रोज का एक आम दृश्य था। लेकिन इसे देखने में उसे रोज की तरह आज भी मजा आने लगा।

मंगी काकी के दोनों छोरे, दूर रूखड़े पर टट्टी बैठ रहे हैं। दोनों बातें करते जा रहे हैं। दोनों के सामने पानी से भरे टीन के छोटे-छोटे डिब्बे रखे हैं, जिन्हें पकड़ने के लिए पतली रस्सी का हैंडल बनाया गया है। दोनों पत्थर फेंककर एक-दूसरे के डिब्बे को गिराने की कोशिश कर रहे हैं। दोनों गालियाँ दे रहे हैं। दोनों हँस रहे हैं। थोड़ी-थोड़ी देर में दोनों अपने डिब्बे सहित उठकर दूसरी जगह बैठ जाते हैं। उनके द्वारा छोड़ी गई जगह और सामग्री पर एक सूअर झपट रहा है। कुछ देर बाद दोनों को विसर्जन में देर लगने लगी और सूअर की उतावली बढने लगी। यह तालमेल बिगड़ा तो उतावला सूअर उनके करीब पहुँचकर चाटने की कोशिश करने लगा। पहले दोनों चिल्लाये फिर जोर से रोते हुए नंगे ही घर की ओर भागे। सूअर डरकर दूसरी ओर भागा। इस भागदौड़ में दोनों के डिब्बे लुढ़क गए और सारा पानी बह गया। बिन्नू का मन खिन्न हो गया। दृश्य का आनंद उसके लिए खत्म हो गया था।

दरवाजे से बिन्नू लौट आया। इस भरी दोपहर में वह किसके घर जाए, तय नहीं कर पाया। चंदू के साथ खेलना उसे अच्छा लगता है लेकिन इस समय चंदू घर पर नहीं होगा। चंदू ने खुद बताया था। दिनभर वह बकरियाँ चराने जंगल में जाता है। दीनू और लालू भी घर पर नहीं होंगे। वे दोनों अपनी माँ के साथ रोड पर गिट्टी तोड़ने जाते हैं। हरि बाप के साथ चप्पलें टाँकता है और गोविंद मछलियाँ पकड़ने जाता है। स्कूल से गर्मियों की छुट्टियाँ लगते ही सबने अपनी-अपनी दिनचर्या बता दी थी। ब्राह्मण टोले में शंकर, कमल, प्रकाश सभी की स्थिति उसके जैसी ही है। दोपहर को कोई भी घर से बाहर नहीं निकल सकता है।

मायूस होकर वह वापस पलट गया। भीतर आया तो देखा, माँ ने इस तरफ करवट ली थी। माँ के पेट से साड़ी का पल्लू नीचे खिसक गया था। खूब उभरा हुआ एकदम गोरा पेट देखकर बिन्नू ने सोचा माँ को इसका भार महसूस नहीं होता क्या? पहले जब माँ का पेट ज्यादा फूला हुआ नहीं था तो बिन्नू ने समझा था, ज्यादा खा लेने के कारण फूल गया है, जैसे दादाजी का पेट फूल जाता है। फिर बिन्नू ने देखा कि दिनों-दिन माँ

का पेट फूलता जा रहा है। एक दिन उसने दादी को कहते सुना कि, - "पेट में बच्चा है, देह को जरा काम दे। पनघट से सिर पर घड़ा रखकर लाया कर। बिना तकलीफ से बच्चा होगा।" बिन्नू को तब पता चला कि माँ के पेट में बच्चा है। बस इस बात का पता नहीं चल पाया कि यह बच्चा बाहर कैसे आएगा? माँ से उसने पूछने की कोशिश की थी। उसने झिड़क दिया था, - "अच्छे बच्चे ऐसी बातें नहीं करते हैं।"

अब इसमें अच्छे या बुरे बच्चे की भला कौन-सी बात हुई! माँ के झिड़क देने के बाद उसकी उत्सुकता बढ़ गई। मास्टर साहब से पूछना संभव नहीं है। स्कूल की छुट्टियाँ चल रही हैं।

वह धीरे से जाकर माँ के पास लेट गया और माँ के पेट पर हाथ धर दिया। माँ ने हल्के-से आँखें खोली और पूछा, - "बाहर आँगन में क्या कर रहा था?"

उसे अचरज हुआ, माँ को कैसे पता चला कि वह उठकर आँगन में गया था? वह बच्चे वाली बात भूल गया। माँ मुस्करा दी। उसे माँ का मुस्कराना अच्छा लगता है। माँ के नरम पेट पर उसका हाथ साँसों के उतार-चढ़ाव के साथ ऊपर-नीचे हो रहा है। उसे अच्छा लगा। उसने माँ की बड़ी-बड़ी आँखों में देखा, वहाँ बहुत सारी हँसी और थोड़ी-सी नींद भरी हुई है।

उसे नींद तो नहीं आई लेकिन देर तक माँ के पास लेटा रहा और उसके पेट से, साड़ी के पल्लू से और बालों की ढीली-ढीली चोटी से खेलता रहा। फिर बैठक से दादाजी के खाँसने की आवाज आई तो माँ चौंककर उठ बैठी। बोली, - "अरे! चार बज गए, चल, दादाजी के लिए चाय बनानी है।"

इतने दिनों में बिन्नू समझ गया है कि दादाजी को चार बजे खाँसी नहीं आती है। वे चार बजे सोकर उठते हैं और अपने उठने की सूचना भीतर, खाँसकर देते हैं।

दादी भी उठ गई। वह भी माँ के साथ रसोईघर में चली गई। बिन्नू बाहर बैठक में दादाजी के पास आ गया। पिताजी अभी भी शहर से नहीं लौटे हैं। रात आठ बजे की आखिरी बस से आएँगे।

बिन्नू ने लट्टू उठाया और उस पर सूत लपेटने लगा। तभी दादाजी ने आवाज लगाई। वह करीब गया तो कहा, - "ये भौरी रख दे। बाद में खेलना। जा पहले पानी लेकर आ।" वह कुढ़कर पानी लाने भीतर चल दिया। हर कोई उसे काम बताता रहता है। 'बिन्नू पानी देकर आ', 'बिन्नू चाय लेकर जा', 'बिन्नू ये कर', 'बिन्नू वह कर'। उसने निश्चय

किया कि वह भी बड़ा होकर सभी पर 'हुकम' चलाएगा। लेकिन किस पर? दादा तो अभी से बूढ़े हो गए हैं। उसके बड़े होने तक ज्यादा बूढ़े हो जाएँगे या गोकुल काका की तरह मर जाएँगे। वह दुखी हो गया। उस पर हुकम चलाने के लिए सब जिंदा हैं और उसका टाइम आएगा तो मरने का बहाना करेंगे। बहाना क्या करेंगे, सचमुच ही मर जाएँगे, ये तो गलत बात है। ऐसे में तो उसका बड़ा होना ही व्यर्थ चला जाएगा!

वह दादाजी के पास जाकर बैठ गया, वह कमीज ऊपर उठाकर पेट पर हाथ घुमा रहे हैं। बिन्नू ने देखा, दादाजी का पेट भी खूब बड़ा और उभरा हुआ है।

- "दादाजी, आपके पेट में भी बच्चा है क्या?" बिन्नू ने दादाजी के पेट पर हाथ धरकर पूछा। दादाजी ने पेट पर हाथ फिराना छोड़ दिया। उसे अचरज से देखने लगे।

- "तुझे ऐसा किसने कहा?" दादाजी ने पूछा।

- "किसी ने नहीं, पर आपका पेट भी तो माँ के पेट की तरह फूला हुआ है। माँ के पेट में तो बच्चा है ना?" बिन्नू ने अब दादाजी के पेट से हाथ हटाकर उनकी हथेली पर हाथ धर दिया।

दादाजी ने गरदन घुमाकर अचरज और गुस्से से माँ की ओर देखा जो इसी बीच चाय लेकर बैठक में आ गई थी। बिन्नू ने देखा माँ के चेहरे पर गुस्सा, लाचारी और शर्म एक साथ आ गए।

- "मेरा पेट तो हाजमा बिगड़ जाने के कारण फूल गया है।" दादाजी ने उसे समझाया लेकिन बिन्नू की समझ में नहीं आया।

- "तो फिर यह कैसे पता चला कि माँ का हाजमा खराब नहीं है बल्कि उसके पेट में बच्चा है।" बिन्नू ने फिर पूछा।

अब दादाजी को माँ जैसी सुविधा नहीं थी। माँ ने सिर पर पल्लू नीचे खिसकाकर घूँघट कर लिया लेकिन दादाजी क्या करते। शायद इसीलिए झुँझला गए। बोले, - "कौन सिखाता है इसको ऐसी उल्टी-सीधी बातें?"

माँ कुछ बोलती, उसके पहले ही बिन्नू ने कहा, - "उस दिन दादी बता रही थी माँ को। मैंने भी सुना।"

अब तक माँ ने चाय का प्याला नीचे रख दिया था और उसका हाथ पकड़कर लगभग घसीटते हुए भीतर चल दी। बिन्नू की समझ में नहीं आया कि एक साधारण-सा

सवाल पूछा है दादाजी से, इसमें इतना गुस्सा करने वाली क्या बात है भला! जब माँ ने उल्टी-सीधी बातें नहीं सिखाई तो मना कर देती। दादाजी के सामने ऐसे दुखी हो रही थी जैसे वह कोई अपराध कर बैठी हो! वह उल्टे-सीधे सवाल पूछता है तो इसमें माँ का क्या दोष?

इसी तरह पढ़ाई के समय वह खेलने चला जाता है तो बाबू भी माँ को ही डाँटते हैं। दादाजी ने कभी बाबू को नहीं डाँटा। बिन्नू के बदले जो भी डाँट पड़ती है वह या तो माँ को सुननी पड़ती है या दादी के हिस्से में आती है। बिन्नू ने सोचा यह बुरी बात है, लेकिन ऐसा वह बाबू या दादाजी से कह नहीं सकता। अलबत्ता माँ जरूर उसकी हर बात में कहती है। 'यह बुरी बात है।'

उसने माँ की ओर देखा। रसोईघर तक आते-आते उसका गुस्सा भाप हो गया। भीतर रसोईघर में लाकर माँ ने उसे लकड़ी के पाट पर बैठा दिया।

- "उल्टे-सीधे सवाल करता है। अच्छी बातों में मन लगा।" माँ ने उसे डाँटा।

- "तो क्या पेट में बच्चा होना अच्छी बात नहीं है?" उसने पूछा तो माँ झुँझला गई। बोली, - "चुप कर अब।" फिर वह कुछ और पूछता इसी के पहले पीतल के छोटे डिब्बे से मठरी निकालकर उसे दे दी। वह खुश हो गया। तभी उर्मि भीतर आई। माँ ने कहा, - "जा, अब उर्मि के साथ बाहर के कमरे में खेलो।"

उर्मि उसी के साथ पढ़ती है। उम्र में उसी के बराबर है। उर्मि के साथ खेलना उसे अच्छा तो नहीं लगता। हमेशा श्याणपत बताती है लेकिन ऐसे समय में उसकी मजबूरी है। उर्मि की स्कूल में ही नहीं, यहाँ बिन्नू के घर में भी सभी तारीफ करते हैं। बिन्नू की दादी तो हमेशा उर्मि की तारीफ करती है। 'होशियार लड़की है। सत्रह का पहाड़ा बोल लेती है। रामायण की चौपाइयाँ कैसे फर-फर बोलती है! गीता के श्लोक तो उसे कंठस्थ है। रोटी बना लेती है। सब्जी बघार लेती है।'

वह कुढ़कर रह जाता है। उर्मि पेड़ पर चढ़कर कच्चे आम तोड़कर बताए? दौड़ती बैलगाड़ी से गन्ना खींचकर बताए? 'बिच्छू बैड़ी' से बिच्छू पकड़कर, उसके डंक तोड़कर, माचिस में बंद करके बताए? यह सब कहो तो दादाजी हँसते हैं। कहते हैं, यह सब तो बदमाशियाँ हैं। होशियारी नहीं। यानी जो कठिन काम है वह सब बदमाशियाँ हैं और रट्टू तोता होना होशियारी है। उसने एक बात और महसूस की। जिन सवालों और बातों को वह बहुत गंभीरता से पूछना या बताना चाहता है, घर में या तो सभी लोग उसकी बात सुनकर हँस देते हैं या डाँट देते हैं। अरे भई, तुम्हें नहीं आता है तो कह दो,

नहीं आता है। हम भी स्कूल में सवाल न आने पर कह देते हैं कि नहीं आता है। यूँ तुम्हारी तरह हम माट्साब के सवाल पर हँस दें तो खाल खिंच जाए! माट्साब कहते हैं, माँ-बाप भी गुरू की तरह होते हैं। बिल्कुल होते होंगे, हमने कब मना किया! फिर माँ-बाप भी तो गुरू की तरह होना चाहिए। पर ये सब बड़े हैं, कौन समझाए इन्हें?

उर्मि के साथ वह बीच वाले कमरे में आ गया। उर्मि ने पूछा, - "काकी क्यों डाँट रही थी तुझे?"

बिन्नू को भूली हुई बात फिर याद आ गई। बोला, - "तुझे मालूम है माँ का पेट क्यों फूला हुआ है?"

- "हाँ! काकी के पेट में बच्चा है। मेरी माँ कह रही थी, पिताजी से।" उर्मि ने सहजता से बताया। उसे इस बात में ऐसा कुछ नहीं लगा जिससे बिन्नू को डाँट पड़े।

- "माँ के पेट में यह बच्चा घुसा कैसे?' 'बिन्नू ने पूछा। कई दिनों से यह सवाल उसे परेशान कर रहा था।

उर्मि सोच में पड़ गई। वह खुश हो गया। अब निकल गई दारी की सारी होशियारी!

बहुत झिझक के साथ उर्मि ने कहा, - "मुँह के रास्ते?" हालाँकि खुद उर्मि की आवाज इतनी कमजोर और अविश्वास से भरी थी कि उसकी एक हँसी ने उर्मि को मायूस कर दिया।

- "सोच भला एक बड़ा कौर मुँह में रख लेते हैं तो निगलना मुश्किल हो जाता है। फिर इतना बड़ा बच्चा माँ ने कैसे निगला होगा?" उसने तनिक अचरज से कहा तो उर्मि की गरदन भी स्वीकृति में हिलने लगी।

- "टट्टी के रास्ते?" उर्मि ने थोड़े संकोच और थोड़े साहस के साथ कहा।

- "बिल्कुल नहीं।" उसने इनकार में मुंडी हिलाई, - "अरे, कई बार तो वहाँ से टट्टी मुश्किल से निकलती है। कड़क हो जाती है तो कितनी तकलीफ होती है तो भला वहाँ से बच्चा कैसे भीतर जाएगा?" उसने कहा और खुद ही मायूस हो गया। आखिर यह रहस्य उसे भी बेचैन कर रहा है।

- "सू-सू के रास्ते?" उर्मि ने धीरे से कहा और तत्काल खुद ही इनकार में सिर हिला दिया। उसके बोलने से पहले ही वह बोल पड़ी, - "वहाँ से सू-सू की एक पतली धार निकलती है। वहाँ से भला बच्चा कैसे भीतर जाएगा?"

- "फिर?"

- "अक्कल फूटी!" उर्मि ने कहा और बिन्नू की ओर देखा तो लगा, वहाँ तो अक्कल पहले ही फूटी पड़ी है। उर्मि के चेहरे पर आए इस व्यंग्य को वह समझ गया। लेकिन आज वह परास्त नहीं होना चाहता है। उसे उर्मि की परेशानी में मजा आने लगा। उसने उर्मि के आगे नई परेशानी खड़ी की।

- "भीतर कैसे गया, छोड़ इस बात को। चल यह बता कि बाहर कैसे आएगा?"

उर्मि चारों खाने चित्त!

कुछ क्षण वह उसे हारे हुए चेहरे के साथ देखती रही फिर बोली, - "चल तू बता!"

वह भी मायूस हो गया। धीरे से बोला, - "मुझे भी नहीं मालूम।"

उर्मि के चेहरे पर आत्मविश्वास लौट आया, बोली, - "फिर क्यों फालतू में अकड़ दिखा रहा है?" कहकर उर्मि ने उसे हल्का-सा धक्का दिया और यह जा वह जा।

जवाब न दे पाने के बावजूद उसे इस बात का संतोष था कि उसने उर्मि को हरा दिया है। अब उसे भरोसा होने लगा कि ये सवाल इतने कठिन हैं कि गणित के शुक्ला माट्साब भी हल नहीं कर सकते हैं। शुक्ला माट्साब तो क्या उनके बापजी भी हल नहीं कर सकते हैं। उसने तनिक सीना फुलाते हुए सोचा। वह मुस्कराते हुए रसोईघर की ओर आया तो देखा, माँ रोटी बनाने की तैयारी कर रही है। माँ इस समय रसोईघर में अकेली है। उसे यह विजय बताई जा सकती है।

- "माँ, आज मैंने उस उर्मि की बच्ची को हरा दिया!" वह खुश होकर बोला।

- "ये उर्मि की बच्ची क्या होता है? ऐसे नहीं बोलते और बात क्या हुई?" माँ आटे में पानी डालते हुए बोली।

- "मैंने उससे पूछा कि बता माँ के पेट में बच्चा कहाँ से आया तो नानी मर गई उसकी!" कहकर वह खुश होकर माँ की ओर देखने लगा कि वह भी खुश हो जाएगी।

- "हे भगवान! ये उल्टी-सीधी बातें तेरे मगज में आती कहाँ से हैं! कहाँ से सीख आता है ये गंदी बातें?" माँ खीझने लगी तो वह घबरा गया। ये तो बाजी उल्टी पड़ गई।

थोड़ी देर तक माँ उसे गुस्से से देखती रही, फिर उसका चेहरा नरम होने लगा। शांत स्वर में बोली, - "यहाँ आ!"

वह चुपचाप माँ के पास जाकर खड़ा हो गया। माँ ने उसके माथे पर हाथ फिराया और प्यार से बोली, - "बच्चों को ऐसी बातें नहीं सोचना चाहिए। बुरी बात है।"

- "अब इस बार सोच लिया है तो बता दो।" उसने कहा तो माँ मुस्करा दी। उसकी आँखें भी मुस्करा दीं। बोली, - "बच्चा भगवानजी ने दिया है। भगवानजी ने पेट में धर दिया है। जो लोग रोज भगवानजी की सच्चे मन से पूजा करते हैं, भगवानजी उसकी सुनते हैं। अब तुम बाहर जाकर खेलो।" उसने चुपचाप सिर हिला दिया। प्रश्न तो वहीं रह गया कि कैसे? कैसे धर दिया?

भगवान से पूछा जा सकता है लेकिन मंदिर में वह दादी के साथ जाता है या माँ के साथ। वहाँ सिर्फ हाथ जोड़कर खड़े रहो। दादी या माँ कुछ बोलने नहीं देती हैं। चिकनी फर्शियों पर फिसल पट्टी भी खेलने नहीं देती हैं। बिचारे भगवान को भी दिन-रात भाग-दौड़ लगी रहती है। पिछले साल पानी नहीं गिरा था। गाँववालों ने भगवान की मूर्ति को तीन दिनों तक पानी में डुबाकर रखा था। तब कहीं जाकर पानी गिरा था। पानी में डूबे हुए भगवान का जी कितना घबराया होगा? वह भगवान होता तो पानी बाद में गिराता पहले तो गाँववालों की चमड़ी उधेड़ देता। मदद माँगने का यह कौन-सा तरीका है? पर भगवान ने तो पास के गाँव में भी पानी गिराया था। जबकि उस गाँव में किसी ने भगवान को पानी में डुबाया भी नहीं था। शायद इसी डर के मारे भगवान ने पानी गिराया हो कि पास के गाँव की नकल में ये लोग भी पानी में डुबायेंगे तो जान पे बन आएगी। भगवान हैं तो क्या हुआ, जान का डर तो भई, हर किसी को लगता है! बिन्नू को यह देखकर बड़ा डर लगता है। रोज जिसकी पूजा करते हैं। जिसके आगे नाक रगड़ते हैं, उसके साथ भी ऐसा दुर्व्यवहार करते हैं। जबकि भगवान तो हर किसी की मदद करते हैं। कृष्णापुरा वाली मौसी की लड़की की शादी नहीं हो रही थी। सोलह सोमवार के व्रत किए, भगवान ने झट से शादी करा दी। खरगोन वाली बुआ ने तो अपने दोनों बेटों को पास कराने के लिए इसी मंदिर में नाक रगड़ी थी। दोनों को भगवान ने पास करा दिया। गणपत काका को सट्टे का नंबर बताया। धनगाँव वाले काकाजी बीमार पड़े तो जल्दी से अच्छा कर दिया था। खंडवा वाली बूढ़ी बुआ-दादी बीमार पड़ीं तो घर में कोई उनको रोटी तक नहीं देता था। इलाज नहीं कराता था। वह रोज कहती थीं, 'भगवान उठा ले!' भगवान ने रोटी तो नहीं दी, न इलाज कराया और न उठाने आए लेकिन हाँ एक दिन वह मर गई। उठाया तो घर के लोगों ने और मसान में जलाकर आ गए। सुमेर दादा रोज दारू पीकर अपनी घरवाली को पीटते थे। वह रोज

मंदिर में आकर भगवान के आगे रोती थी कि या तो इनकी दारू छुड़ा दे या मुझे मौत दे दे। भगवान ने तुरंत सुन ली। एक दिन वह जलकर मर गई। उसके जलने का प्रबंध भगवान ने कैसे किया, बिन्नू को मालूम नहीं लेकिन वह दादी की इस बात से सहमत नहीं है कि सारा किया धरा सुमेर दादा का है। भगवान के होते हुए सुमेर दादा क्यों कुछ करने लगे? हाँ इतना जरूर हुआ कि इतने सारे कामों में लगे भगवान उसकी बीमार नानी को अच्छा करना भूल गए तो बेचारी मर गई। फिर भगवानजी उसको वापस जिंदा नहीं कर पाए। जबकि उसने खुद भी भगवान के आगे नाक रगड़ी थी।

उसने सोचा, भगवानजी को भी कितने काम करने पड़ते हैं। दुनियाभर की औरतों के पेट में बच्चा धरते-धरते हाथ दुखने लग जाते होंगे। भगवान हैं भी छोटे से। उसने गाँव के मंदिर में देखा है, पालने में घुटने के बल बैठे हुए कृष्ण भगवान को। इतनी भागदौड़ में तो किसी-किसी औरत के पेट में बच्चा रखना भूल भी जाते होंगे। इतने साल से वह देख रहा है। दादी रोज पूजा-पाठ करती है लेकिन भगवान ने दादी के पेट में एक बच्चा नहीं रखा है। उसने सोचा, वह दादी से पूछेगा। फिर उसे माँ की बात याद आई। एक बार माँ ने कहा था, "भगवान के काम में मीन-मेख नहीं निकालना चाहिए।" नहीं तो क्या होगा? उसने सोचा। लेकिन इसका जवाब उसके पास तैयार था। भगवान उसको फेल कर देंगे और जब एक बार भगवान फेल कर देंगे तो वह पक्के से जानता है कि शुक्ला माट्साब भी उसको पास नहीं कर पाएँगे। सबकी दुखती नस भगवान के पास है। किसको कैसे डराया जा सकता है, भगवान को सब मालूम है। वह डर गया। जब डरा तो बाहर बैठक में भागा।

वह बाहर आया तो देखा, रतन काका आए हैं। बहुत बूढ़े हैं। दादाजी से भी ज्यादा बूढ़े हैं। वह समझ गया। अब रात तक बैठेंगे। दो चार दिन छोड़कर रतन काका दादाजी से मिलने आ जाते हैं। रतन काका जब भी आते हैं दादाजी के पास लकड़ी के पलंगनुमा तख्त पर नहीं बैठते हैं बल्कि नीचे बिछी दरी पर बैठते हैं। भीतर अब चाय बन रही होगी, बिन्नू ने सोचा। तभी भीतर से माँ एक लोटे में चाय लेकर आई और छप्पर में लटके हुए कप को निकालकर उसमें चाय डालकर रतन काका के सामने कप रख दिया। फिर भीतर रसोईघर में गई और दुबारा लौटी तो एक तश्तरी पर चाय का प्याला लेकर आई और दादाजी को दे दिया। यह आज कोई नई बात नहीं है। हमेशा ऐसा होता है। रतन काका के लिए रसोईघर से चाय का प्याला क्यों नहीं आता है और रतन काका के चले जाने के बाद प्याला रसोईघर में क्यों नहीं ले जाते? उसे यहीं छप्पर में क्यों टाँग देते हैं? दादाजी जिस प्याले से चाय पीते हैं वह प्याला भीतर रसोईघर में ले जाते हैं।

वही क्यों, बामण टोले के पंडित दादा, शर्मा माट्साब, शुक्ला माट्साब या सोलंकी दादा, चौहान काका इनमें से कोई भी आता है तो चाय का प्याला भीतर से आता है और चाय पीने के बाद प्याला रसोईघर में वापस ले जाते हैं। सिर्फ रतन काका की चाय का प्याला यहीं छप्पर में टँगा रह जाता है।

क्यों?

एक बार उसने दादाजी से पूछा भी तो दादाजी ने अजीब-सा जवाब दिया था। रतन काका छोटी जात के हैं। उसने लाख सोचा, सिर खपाया लेकिन वह समझ नहीं पाया कि इस जाति का छप्पर में प्याला टाँगने से क्या संबंध है? उसने सोचा, उसके पास बहुत सारे कठिन सवाल इकट्ठे हो रहे हैं। वह भीतर रसोईघर में आया। माँ भी चाय पी रही है।

- "माँ, रतन काका की चाय का कप छप्पर में क्यों टाँगते हैं?"

उसने देखा, माँ और दादी दोनों ने चाय पीना छोडकर उसे घूरना शुरू कर दिया है।

- "मैंने तुझे अभी समझाया था कि बच्चों को ऐसी उल्टी-सीधी बातें नहीं करना चाहिए।" फिर माँ लाड़ से बोली, - "देख, तू अच्छा लड़का है ना? अच्छे बच्चे ऐसी बुरी बातें नहीं करते हैं!" कहकर वह थोड़ी देर उसे देखती रही, फिर उठी और खुद के और दादी के जूठे चाय के प्याले पिछवाड़े माँजने के लिए रख आई।

वह उदास हो गया। यह भी एक बड़ी परेशानी है। यही समझ में नहीं आता है कि कौन से सवाल करना अच्छी बात है और कौन से सवाल करना बुरी बात है। यदि उसे मालूम हो तो क्या वह बुरी बात करेगा? बिल्कुल नहीं। उसने खुद ही जवाब दिया। अजीब हैं ये घर के लोग भी! यदि ये बुरी बातें हैं तो फिर करते क्यों हैं? जबकि उधर स्कूल में शुक्ला माट्साब तो कहते हैं... पूछो, जो भी समझ में नहीं आए, पूछो! देखते-देखते तो कोई भी अच्छी-भली बात अचानक बुरी हो जाती है। जब दादाजी अच्छे, रतन काका अच्छे। अरे, अच्छे न होते तो घर में क्यों आते? घर में सभी लोग अच्छे, यहाँ तक कि माँ की बनाई चाय भी अच्छी। फिर रतन काका के लिए चाय का प्याला छप्पर में टाँगना बुरी बात क्यों? फिर वही बात बुरी बात है तो करते क्यों हैं? अरे! इनका ऐसा करना बुरा है या मेरा पूछना? जब इनकी की हुई बात बुरी होगी तभी तो मेरा पूछना बुरा होगा?

चाय पीकर वह वापस बैठक में लौट आया। वह जाकर दादाजी के पास बैठ गया। उसे देखकर रतन काका के चेहरे पर लाड़ आ गया। जैसे भीतर रसोईघर में माँ के चेहरे पर आ गया था।

रतन काका ने जब वापस दादा की ओर गरदन घुमाई तो लाड़ चेहरे से रपट गया और कुछ देर पहले के दुख ने फिर जगह बना ली।

- "इस साल खेत से पालवा खोदना जरूरी हो गया है। छोरा कहता है, मजदूर लगा लो। अब बताओ भाईजी, मजदूर लगाएँगे तो घर में बीज का पैसा भी नहीं बचेगा। मुझसे तो काम अब होता नहीं।" रतन काका ऐसे बोले जैसे एकाएक अभी बीमार पड़ गए हों। आवाज थकी-थकी हो गई।

- "पालवा खोदना तो पड़ेगा रतन! शायद ही कोई किसान बचा हो इससे।" दादाजी ने धीरज दी।

- "खोदना तो पड़ेगा भाईजी। नहीं खोदा तो खेत में फसल से ज्यादा पालवा दिखेगा। बहुत नुकसान होगा फसल का।" काका जमीन को घूरने लगे और किसी सोच में उनकी मुंडी हिलने लगी। मेले में जैसे स्प्रिंग लगा मिट्टी का बूढ़ा साधू बाबा मिलता था, जिसके सिर को जरा-सा धक्का दो तो सिर आगे-पीछे हिलने लगता था।

- "बाद में ज्यादा परेशानी होगी।" दादाजी ने समझाया। - "अभी इन झाड़ियों की जड़ें गहरी नहीं हैं। बाद में ये व्यर्थ की झाड़ियाँ बड़ी हो जाएँगी तो खोदना मुश्किल होगा।"

- "मुश्किल तो सभी दूर है भाईजी। डेढ़ एकड़ का टुकड़ा हिस्से में आया है। तैयार हो जाएगा तो साल भर की रोटी का इंतजाम हो जाएगा।" रतन काका कुछ देर सोचते रहे फिर बोले, - "मजदूर ही लगाएँगे। उनके पास औजार रहेंगे तो झाड़ियाँ जल्दी खोद देंगे। बीज के लिए फिर शहर में किसी गादी पर नाक रगड़ूँगा।" कहकर वे हँसे तो बिन्नू को लगा जैसे वे रो पड़े हों लेकिन उनके चेहरे को देखकर कुछ भी पता नहीं लगा। रतन काका के चेहरे पर न तो हँसी थी और न रुलाई।

- "बिन्नू के बाबू करेंगे कल बीज का इंतजाम। तुम्हें दिक्कत आए तो बताना!" दादाजी ने मुलायम स्वर में कहा।

- "आप से नहीं कहूँगा तो किसे कहूँगा भाईजी?" रतन काका ने कहा और जमीन पर उँगली से लकीरें खींचने लगे। उनका चेहरा उदास हो गया।

- "और फिर खेत तैयार करके क्या होगा रतन?" दादाजी तख्त पर गावतकिए के सहारे बैठते हुए बोले, - "अबके पानी अच्छा गिरे तो बात बने। वर्ना कुओं में पानी ही कितना है? पानी हो भी तो बिजली का ठिकाना नहीं है। चुन्नी भैया तो अब पाँच साल बाद ही मुँह दिखाएँगे। चार-चार दिन गाँव में बिजली नहीं आती है।" कहकर दादाजी ने एक आह भरी। फिर रतन काका ने एक ऐसी बात कही जो बिन्नू की न समझ में आई और न वह सहमत हुआ। रतन काका ने कहा, - "किसान होना अब जुरम हो गया भाईजी!"

किसान होना जुर्म कैसा है? हिंदी के माट्साब तो कहते हैं किसान देशवासियों का भाग्य विधाता है। वह सबका पेट भरता है। किसान न हो तो अनाज कौन उगाएगा? बात बराबर ठीक है। कोई शक की बात नहीं इसमें। पंद्रह अगस्त पर स्कूल में सबने खुशी-खुशी नारे लगाए थे। जय जवान - जय किसान। तब उसे याद आया, रतन काका स्कूल नहीं जाते हैं। तभी तो! जाते तो आज ऐसी गलत-सलत बात नहीं करते।

तभी दादाजी ने कहा, - "वो देख, तेरे बाबू आ गए!" उसने देखा, बाबू भीतर आए, तो रतन काका ने उन्हें भी नमस्कार किया। नमस्कार का जवाब देकर बाबू भीतर चले गए। वह अपने पिताजी को हमेशा बाबू ही कहता है। घर में सभी ने कई बार टोका कि बाबूजी कहे लेकिन वह बाबू के आगे जी नहीं लगा पाया। फिर एक बार शब्द जबान पर चढ़ा तो खुद भी कोशिश करने पर कह नहीं पाया। अब सभी ने टोकना भी छोड़ दिया।

कुछ देर बाद रतन काका भी चले गए। खाना तैयार हो गया तो दादाजी भी उठकर भीतर के कमरे में आ गए। खाना खाकर दादाजी वापस बैठक में चले गए और बाबू खाना खाकर गाँव में घूमने निकल गए। घर का सारा काम निबटाकर माँ और दादी बैठक में आई। दादी ने दादाजी को बताया, - "चंदो काकी की बहू को लड़का हुआ है। उसके मैके से मेहमान आए हैं। रात को गीत गाने औरतें इकट्ठा होंगी। मैं भी बहू को लेकर जा रही हूँ।"

बिन्नू को लगा दादी सूचना दे रही है लेकिन दादी देर तक खड़ी रही तब दादाजी ने किताब से सिर उठाया और कहा, - "हाँ-हाँ चली जाओ!" तब बिन्नू की समझ में आया कि दादी इस तरह आज्ञा ले रही थी।

- "मैं भी जाऊँगा!" उसने जिद की तो दादाजी ने उसे अपने पास बैठा लिया।

- "तू वहाँ औरतों के बीच क्या करेगा?" दादाजी ने उससे पूछा तो वह तुनक गया, - "माँ क्या करेगी?"

- "वो गीत गाएगी!"

- "तो मैं भी गीत गाऊँगा!" वह मचल गया। बोला, - "उर्मि भी आएगी।"

- "उर्मि लड़की है, तू लड़का है। मर्द का औरतों के बीच क्या काम?" दादा ने फिर समझाया।

दादी और माँ चली गई। वह मान गया। मर्द बनना उसे अच्छा लगा लेकिन थोड़ा दुख भी हुआ कि मर्द क्या हुआ औरतों के पास बैठना भी अपराध हो गया! फिर भी उसने सोचा कि कम-से-कम आज तो वह मर्द बना रहेगा। दादाजी पढ़ते रहे तो जाने कब उसे नींद लग गई।

सुबह नींद खुली तो उसे अचरज हुआ कि वह भीतर के कोनेवाले अपने कमरे में था, जहाँ माँ और बाबू सोते हैं। रात को किसी समय माँ उसे उठाकर भीतर ले गई होगी या फिर बाबू ले गए होंगे! यह सोचकर उसने अचरज को कुछ कम किया। वह उठकर बाहर के कमरे में आया और वहीं से झाँककर देखा कि माँ रसोईघर में है। उसे मालूम है कि माँ अब बहुत देर तक काम में लगी रहेगी। दोपहर के खाने के बाद ही उसे फुरसत होगी। वह रसोईघर में गया तो माँ ने उससे कहा, - "जाओ, मुँह-हाथ धोकर आओ। मंजन कर लो। फिर चाय पी लेना।" वह फिर वापस पलट गया। पीछे के खुले हिस्से में जहाँ नींबू के पेड़ लगे हैं, वह पत्थर पर बैठकर मंजन करने लगा।

मंजन करने के बाद, मुँह-हाथ धोकर वह पलटा तो देखा, बरतन माँजनेवाली लड़की सरला बरतन माँजने के बाद हाथ धोकर साड़ी के पल्लू से हाथ पोंछ रही है। उसे देखकर हँस दी। बिन्नू को यदि माँ के बाद किसी की हँसी अच्छी लगती है तो इसी लड़की की। जैसे मुँह में अनार के दाने भर रखे हों। सारे दाँत खिल उठते हैं। लेकिन आज उसने हँसी का जवाब नहीं दिया। सरला ने कहा, - "भैयाजी, क्या बात है, आज बड़े चुप-चुप हो?" वह फिर भी कुछ नहीं बोला, चुपचाप आगे बढ़ा तो सरला ने हाथ आगे कर उसका रास्ता रोका और बोली, - "मुँह में दही जमा है क्या?"

उसने सरला का हाथ हटाया और कहा, - "तुम अपना काम करो, हम मर्द हैं, और औरतों से बातें नहीं करते हैं।"

- "हाय राम!" सरला ने आँखें नचाकर कहा, - "छोटे बाबू मर्द हो गए और हमें पता भी नहीं चला।" कहकर वह मुस्कराने लगी।

- "हमें भी कब पता था?" बिन्नू ने तिक्त स्वर में कहा, - "कल रात ही तो हम मर्द हुए हैं। वह भी दादाजी ने बताया तो पता चला।"

- "अरे वाह!" कहकर सरला ने उसका हाथ पकड़ लिया, - "जरा हम भी तो देखें रात भर में कितने मर्द हो गए हो?" कहकर खिलखिलाते हुए सरला ने उसकी चड्डी में नीचे से हाथ डाल दिया। बिन्नू घबरा गया।

- "ये क्या कर रही हो? हमारी बंबई को हाथ मत लगाओ!" कहकर उसने सरला का हाथ झटक दिया। सरला हँसी के मारे दोहरी हुई जा रही थी। हँसते हुए बोली, - "तो यह तुम्हारी बंबई है, ऐसा किसने कहा?"

- "दादाजी ने कहा है।" बिन्नू गुस्से से बोला। उसे इसमें इतनी हँसी वाली बात तो दिखाई नहीं दे रही थी। सरला हँसते हुए बैठ गई और बोली, - "ओ बंबई के राजा, जरा जल्दी-जल्दी बड़ा हो और हमें भी बंबई की सैर करा!" कहकर वह फिर हँसने लगी। वह भीतर भागा। भीतर माँ ने चाय के साथ बिस्किट भी दिए तो वह खुश हो गया और सरला पर आया गुस्सा भूल गया।

दोपहर का समय, सारे लोग खाना खा चुके हैं। दादाजी तख्त पर बैठे अखबार पढ़ रहे हैं। बैठक के कोने में दूसरे कमरे में जाने वाले दरवाजे के पास माँ, दादी और सरला के साथ बिन्नू भी बैठा दादी को पान लगाते देख रहा है। दादाजी के लिए घर में ही पान तैयार किया जाता है। सरला जाने किस बात पर हँस रही है। माँ मुस्करा रही है। तभी दादी ने सरला को डाँटा, - "इतनी बड़ी घोड़ी हो गई है। कैसे दाँत निकाल रही है! साड़ी का ध्यान है तुझे कहाँ खिसकी जा रही है? पेट और छाती उघड़ी पड़ी है।" बिन्नू ने देखा, सरला की साड़ी सीने से खिसककर कमर पर आ गई है। उसके गोरे पेट में हँसी के मारे भँवर पड़ रहे हैं। तभी दादी पान की टोकरी लेकर भीतर गई तो सरला माँ के करीब खिसक आई और फुसफुसाते हुए बोली, - "जानकी बुआ की छोरी उषा पेट से थी। अभी परसों ही पेट गिरा आई है।"

- "कब, कहाँ, किसका था?" माँ ने अचरज से एक साथ कई प्रश्न किए।

- "पता नहीं पेट में किसका बीज था। अभी परसों ही शहर में कहीं गिरा आई है। माँ और बड़ा भाई साथ गए थे। अब सभी रो रहे हैं। कहीं छोरा देखकर झटपट शादी करने की बात कर रहे हैं।" सरला उसी तरह फुसफुसाते हुए बोली।

बिन्नू ने सुना सब लेकिन समझ में कुछ नहीं आया। उषा दीदी के पेट में बीज कैसे आ गया? निश्चित रूप से निगल गई होगी। लेकिन खाने की इतनी चीजें छोड़कर बीज क्यों निगला? और फिर पेट कैसे गिराया होगा? पेट को शरीर से अलग तो किया नहीं जा सकता है। पेट कोई हाथ में पकड़ी पोटली है कि गिरा दिया! तभी पड़ोस की शांता मामी आ गई। शांता मामी है तो दादी की उम्र की लेकिन उसका अनाथ भांजा उसके घर रहता है। भांजे ने मामी कहना शुरू किया तो आस-पड़ोस के लोगों ने और फिर गाँव भर ने मामी कहना शुरू कर दिया। माँ ने उठकर शांता मामी के पैर छुए।

शांता मामी की आवाज सुनकर दादी भी भीतर से आ गई। तभी बाबू बाहर से आए और कपड़े की एक थैली दादी को देकर बोले, - "मूँगफली के दाने हैं। बीज के लिए अलग से रखना।" फिर शांता मामी को देखकर पैर छुए। शांता मामी गद्‌गद हो गई।

- "खूब सुखी रहो बेटा। तुमको एक और बेटा हो।"

बाबू मुस्कराकर पलटे तो बिन्नू ने ऐतराज जताया।

- "बच्चा तो माँ को होनेवाला है। बाबू को नहीं।"

- "तो क्या हुआ? तेरी माँ को दिया तो तेरे बाबू ने है। तो यह बच्चा तेरे बाबू का भी हुआ।" शांता मामी ने उसे समझाना चाहा। लेकिन बिन्नू तो पहले से समझा बैठा था।

- "नहीं ये बच्चा बाबू का नहीं है। मुझे मालूम है ये बच्चा किसका है।"

बिन्नू ने अपना ऐतराज फिर जताया तो कमरे में सन्नाटा छा गया। बिन्नू समझ गया कि कोई गलती हो गई है। क्योंकि दादाजी भी अब अखबार पढ़ने का सिर्फ बहाना कर रहे हैं, तिरछी नजर से इधर ही देख रहे हैं। माँ का चेहरा उतर गया है। शांता मामी और दादी का मुँह खुला का खुला है। बाबू जाते-जाते दरवाजे पर ठिठक गए हैं। और गुस्से से माँ को देख रहे हैं। तब दादी की आवाज अटकती हुई निकली, - "किसका है?"

- "भगवानजी का!" बिन्नू ने घोषणा की, - "मुझे माँ ने बताया कि पेट में बच्चा भगवानजी ने रखा है।"

तभी कमरे का माहौल सामान्य हुआ। बिन्नू को बाबू की छोड़ी हुई साँस इस कोने तक सुनाई दी। सरला की खिलखिलाहट में माँ का उतरा हुआ चेहरा जैसे तैरने लगा। बाबू कमरे से बाहर हो गए। दादाजी फिर अखबार पढ़ने लगे और दादी ने उलहाने के स्वर

में कहा, - "मुए ने जान निकाल दी थी।" फिर वह सरला की ओर पलटकर बोली, - "सरला, ये बीज भीतर पीतल के डिब्बे में रख दे और बिन्नू को भीतर ले जा। यहाँ औरतों के बीच बैठकर एक-की-दो लगाता है।" सरला के उठाने से पहले थैली बिन्नू ने उठा ली। सरला उसे भीतर ले आई। बिन्नू के हाथ से थैली लेकर मूँगफली के बीज निकालकर पीतल के डिब्बे में रखते हुए उसने दो-चार दाने मुँह में डाल लिए। बिन्नू उसे घूरता रहा। सरला बोली, - "तू ये तिल का ताड़ कैसे बना देता है?" बिन्नू को सरला की बेवकूफी पर तरस आ गया। उसे मालूम था कि तिल बोने पर तिल का पौधा उगेगा, ताड़ नहीं। उसने जब सरला को समझाया तो सरला ने सिर थाम लिया, - "अरे, मैं तो एक मिसाल दे रही थी।" कहकर उसने फिर दो दाने मुँह में डाल लिए। बिन्नू से अब रहा नहीं गया, - "तू ये मेरे बीज खा रही है, याद रखना।"

- "क्यों, हिसाब में काटेगा?" सरला ने आँखें तरेरी।

- "नहीं, लेकिन कल को जब तू कहीं पेट गिराकर आएगी तो ये मत कहना कि पता नहीं पेट में किसका बीज था। जैसे उषा दीदी भूल गई थी।" बिन्नू ने उसे समझाना चाहा।

सरला थमकर रह गई।

- "हाय राम! क्या आँय-बाँय बक रहा है?" सरला थोड़ी घबरा भी गई, बोली, - "मैं क्यों ऐसा काम करने लगी?"

- "क्यों, उषा दीदी ने नहीं किया क्या? अभी तूने तो बताया था।" बिन्नू ने याद दिलाया।

- "वो तो ठहरी चालू चीज। हर कोई उस पर सवारी गाँठ लेता है।" अब सरला की घबराहट कम हो गई। फिर मुँह बिचकाकर बोली, - "मैं उस बामणी जैसी पूजा पाठ नहीं करती। जो हर किसी को कुंकु-हल्दी चढ़ाती रहती है। और हर कोई चढ़ जाता है उस पर।" कहकर उसने गरदन अकड़ा ली और फिर मुँह बिचका दिया।

- "तू पूजा-पाठ नहीं करती?" बिन्नू ने पूछा।

- "बिल्कुल नहीं।" सरला ने दाएँ से बाएँ फिर बाएँ से दाएँ सिर हिलाया।

- "तभी तो!" बिन्नू ने गंभीरता से सिर हिलाया।

- "क्या तभी तो?" सरला उसे घूरने लगी।

- "तू रोज पूजा-पाठ करती तो भगवानजी तेरे पेट में भी बच्चा रख देते!" बिन्नू ने उसे समझाना चाहा। सरला अब तक सामान्य हो गई थी।

- "पूजा-पाठ से पेट में बच्चे आते तो पुजारी दादा के यहाँ विमला मौसी बाँझ न मरती भैया। वह मंदिर में पैदा हुई और मंदिर में ही मरी।" सरला ने एक लंबी साँस छोड़ी और उसका हाथ पकड़कर वापस कमरे में आ गई। बिन्नू ने देखा, शांता मामी चली गई है। वह माँ के पास जाकर बैठ गया। सरला भी दादी से इजाजत लेकर अपने घर चली गई। बिन्नू समझ गया कि दोपहर के सोने का वक्त हो गया है।

शाम को उसका दोस्त कमल घर आया तो उसे घर से बाहर जाने की अनुमति मिल गई। कमल के साथ वह शंकर, प्रकाश सभी के घर गया। काफी देर बाद जब घर लौटा तो प्रसन्न था।

अब यह रोज का काम हो गया। अब वह शंकर, प्रकाश और कमल के साथ चंदू, लालू, दीनू, गोविंद और हरि के घर भी जाने लगा। कमल जो इनमें एकाध बरस बड़ा है, उसने बिन्नू, शंकर और प्रकाश को समझाया कि घर आकर यह मत बताना कि चंदू, लालू, दीनू, गोविंद और हरि के घर गए थे। घर में यदि पता चला कि बामण के छोरे कहार मोहल्ले या चमारवाड़ी में गए थे तो घर से निकलना बंद कर देंगे और डाँट पड़ेगी अलग। सभी को दोस्ती की कसम खिलाई गई। नदी किनारे उगे बारीक पत्ते के पौधे 'विद्या' की पत्तियाँ हाथ में रखकर 'विद्या' की कसम खाई गई। बिन्नू ने वह पत्तियों वाली नन्हीं शाख लाकर किताब के पन्नों के बीच रख दी। अब वह एक अजीब-से रोमांच से भर गया था। चंदू के साथ सभी दोस्त मछलियाँ पकड़ने नाले पर जाते थे। नाले के बहते पानी के एक हिस्से को किनारे की तरफ से मिट्टी की पाल डालकर रोक दिया जाता। फिर उसी जगह जाल डाला जाता। जाल आकार में बड़े झोले की तरह रहता है और उसमें लकड़ी का अर्द्धचंद्राकार डंडा लगा रहता है। बाद में जब जाल निकाला जाता तो उसमें ढेर सारी मछलियाँ फुदकती रहती हैं। सबसे मजेदार काम तो है हरि के घर उसके बाप को चप्पलें या जूते बनाते देखना। हाथ में राँपी लेकर जब वह चप्पल या जूते के नाप का चमड़ा काटते तो बिन्नू का मुँह खुला का खुला रह जाता। वे बातें भी करते जाते और बगैर चमड़े को देखे गोलाई में चमड़ा भी काटते जाते। यह अभ्यास बिन्नू को मजा देने लगा। सबसे अच्छी बात तो यह थी कि हरि ने कहा था कि वह बिन्नू को भी यह सिखा देगा। बिन्नू गद्गद हो गया। उसने कहा, "हरि मेरा सबसे पक्का दोस्त।" हिंदी व्याकरण की किताब में रखा मोर पंख उसने हरि को उपहार में दिया। हरि भी खुश हो गया।

अब बिन्नू को लगा कि कहीं गर्मियों की छुट्टियाँ जल्दी खत्म न हो जाए। उसे चार बजने का बेसब्री से इंतजार रहता।

आज भी दोपहर को वह माँ और दादी के पास करवटें बदलने लगा। उसे नींद नहीं आ रही है। वह रसोईघर में कुछ खाने की तलाश में उठा। रसोईघर के दरवाजे पर जाकर ठिठक गया। दरवाजा हल्के से बंद है। यानी साँकल नहीं लगी है। सिर्फ पल्ले चौखट तक आकर रुक गए हैं। भीतर उसे बाबू और सरला की आवाज सुनाई दी। उसने दरवाजे की झिरी से आँख लगाकर देखा, बाबू ने सरला का हाथ पकड़ा हुआ है। सरला जोर लगाकर छुड़ाने की कोशिश कर रही है।

- "उस दिन पगार लेने से मना क्यों कर दिया था?" बाबू ने उसका हाथ खींचते हुए कहा।

- "मना नहीं किया।" सरला घूरते हुए बोली, - "सालभर की पगार एक साथ लेंगे और कुछ रुपया और मिलाकार हाथ में कंगन डालेंगे।" कहकर उसने हाथ छुड़ाने के लिए जोर लगाना छोड़ दिया और धीरे से हँस दी।

बिन्नू ने देखा, सरला की हँसी में अजीब-सा भय और उतावली थी। वह न तो उसकी खुशी समझ पा रहा था और न भय को।

- "मुझे तो बोल के देख। दो जोड़ी कंगन हाथ में डाल दूँगा। बस, एक बार पीछे वाले कमरे में चल।" कहकर बाबू भी हँस दिए।

- "ना बाबा...! पीछे वाले कमरे में जब तुम हाथ में कंगन डालोगे तो देह पर कंगन के सिवा और क्या बचेगा?" कहकर वह हँसी। और एक झटके से हाथ छुड़ाकर साथ लगे कमरे में भागी और वहाँ से बैठक में। बिन्नू को अचरज हुआ कि बाबू पीछे के कमरे में सरला को क्यों ले जाना चाहते हैं? कंगन तो यहाँ भी दे सकते हैं। पीछे के कमरे में तो अँधेरा ही अँधेरा है। इस बार अमराई में आम नहीं आए वर्ना इस कमरे में कच्चे आम बिछाकर उस पर घास डालकर 'आड़ी' लगाते हैं और आम पकाते हैं या कपास के सीजन में कपास भरकर रखते हैं।

बाबू वापस पलटने लगे तो बिन्नू भी दौड़कर माँ के पास आ गया। बाबू पलटकर इधर आए, सरला के पीछे नहीं गए। इस कमरे में आकर कुछ देर रुके और बाहर निकल गए। बिन्नू ने सोचा, माँ जागेगी तो वह माँ को बताएगा लेकिन चार बजे माँ जागकर रसोईघर में चली गई और वह मुँह-हाथ धोकर दोस्तों में चला गया। शाम को काफी देर

बाद जब वापस लौटा तब तक वह बात को भूल चुका था। रात खाना खाकर वह सोया, तब तक बाबू लौटे नहीं थे। सुबह उसकी नींद जल्दी खुल गई। देखा, माँ उठकर रसोईघर में नहीं गई थी। पलंग के किनारे बैठी रो रही है। बाबू समझा रहे हैं, - "अच्छा बाबा गलती हो गई। अब नहीं पिएँगे और वैसे भी दो घूँट पीना कोई शराब पीना नहीं होता है।"

- "तो बाल्टी भरकर पी लेते!" माँ ने गुस्से में सिर उठाया।

- "कह तो रहे हैं, गलती हो गई। देखो, कान पकड़ते हैं।" बाबू ने एक उँगली से कान को छुआ और माँ को देखने लगे। वह सिर झुकाए रो रही है। कुछ देर बाबू खड़े रहे फिर कंधे उचकाकर बाहर चले गए। अब बिन्नू उठकर बैठा और माँ के पास आ गया। माँ ने उसे देखा तो झट से आँसू पोंछ लिए।

- "रात को बाबू दारू पीकर आए थे?" उसने पूछा तो माँ घबरा गई।

- "किसी से कहना नहीं बेटा, बुरी बात है।" माँ ने उसके सिर पर हाथ फिराया।

- "क्या?" बिन्नू ने पूछा, "क्या बुरी बात है? दारू पीना या मेरा किसी से कहना?"

- "किसी से मत कहना बेटा।" कहकर वह आँचल सँभालती रसोईघर में चली गई।

उसे थोड़ा दुख हुआ। माँ का इस तरह घबरा जाना उसे अच्छा नहीं लगा। कितनी अजीब बात है, थोड़ी-सी खुशी में माँ खिलखिला उठती है। जरा-सी बात में घबरा भी जाती है। माँ का खुश होना तो बिन्नू कई बार समझ भी जाता है लेकिन माँ की घबराहट के कारण बिन्नू की समझ में नहीं आते हैं। उसने तय किया, वह किसी से नहीं कहेगा।

दोपहर के खाने तक भी यह तनाव घर में बना रहा। माँ और बाबू में बोलचाल बंद रही। खाना खाने के बाद सभी लोग बैठक में आए। दादी पान की टोकरी लेकर बैठ गई और दादाजी के लिए पान बनाने लगीं। तब बाबू ने माँ को लक्ष्य करके दादाजी से कहा, - "पिताजी, इस बार कपास की फसल भी अच्छी हुई है। गेहूँ भी अच्छा निकला है। मैं सोचता हूँ, बिन्नू की माँ को एक 'दोरा' बनवा दूँ।"

माँ ने तत्काल प्रतिवाद किया, - "मुझे नहीं चाहिए।"

बिन्नू को 'दोरा' का मतलब मालूम है। सोने की चेन। दादी अक्सर कहा करती है, 'उनके दहेज में सोने के चार-चार दोरे दिए गए थे।' बिन्नू को अचरज हुआ कि पहले

तो माँ खुद ही बाबू को 'दोरे' के लिए कहा करती थी और आज बाबू खुद कह रहे हैं तो मना कर रही है। उसने माँ को समझाना चाहा, - "माँ लेती क्यों नहीं, बाबू के पास तो और भी गहने हैं। दो जोड़ी कंगन भी हैं।"

इतना कहना था कि सभी अचरज से उसे देखने लगे। बिन्नू को लगा, इन्हें भरोसा नहीं हो रहा है। उसने कहा, - "मैं सच्ची कह रहा हूँ। बाबू अभी कल सरला से रसोईघर में कह रहे थे कि एक नहीं दो जोड़ी कंगन दे दूँगा। बस, पीछे वाले कमरे में चल।" बिन्नू ने माँ के हाथ पर अपना हाथ धरा और कहा, - "तुम चली जाओ बाबू के साथ पीछे वाले कमरे में।"

एक क्षण में सन्नाटा छा गया कमरे में। जैसे रात को तेज रोशनी के बीच बिजली चली जाए! बिन्नू यह तो समझ गया कि यह बदलाव उसके बोलने के कारण हुआ है लेकिन वह ऐसा क्या बोला है जिससे एकाएक चुप्पी छा जाए! उसने देखा कि दादाजी अखबार कुछ ज्यादा ध्यान से पढ़ने लगे। दादी के चेहरे पर गुस्सा और आश्चर्य है। माँ के चेहरे पर गुस्सा इतना अधिक था कि वह गुस्से में काँपने लगी। गुस्सा धीरे-धीरे बढ़ने लगा। फिर माँ की आँखों से आँसू बहे और जोर से रुलाई फूटी। बाबू, जो अचकचाए-से खड़े थे, गुस्से में आगे बढ़े और तड़ से एक चाँटा बिन्नू के गाल पर जमाया। वह छिटककर दूर जा गिरा। दादी ने गुस्से से बाबू को घूरा तो बाबू पैर पटकते हुए बाहर चले गए। बिन्नू को माँ ने उठाकर सीने से लगा लिया। बिन्नू भी माँ के साथ रोने लगा। माँ की हिचकियों के कारण उसके सीने में दुबका बिन्नू का सिर भी हिचकोले लेने लगा। एक अजीब-सी सुरक्षा और सुख महसूस हो रहा था उसे। बिन्नू को माँ का रोना अच्छा लगा। सुरक्षित और दुबके बिन्नू ने सोचा, माँ अभी और थोड़ी देर रोती रहे तो ठीक! लेकिन उसका सुरक्षा-कवच दादी ने तोड़ दिया। उसे माँ से अलग किया और माँ को समझाने लगी। - "ज्यादा नहीं रोते, पेट में बच्चे पर असर पड़ता है!"

रोता हुआ बिन्नू क्षण भर में चुप हो गया। क्या माँ के पेट में बैठे बच्चे ने माँ का रोना देख लिया होगा? लेकिन कैसे? तो क्या बच्चा उसका रोना भी देख रहा होगा? वह फिर रोने लगा।

पूरी दोपहर ऐसे ही तनाव में बीत गई। वह दोस्तों के साथ गया तो देर से लौटा। बाबू घर पर नहीं हैं। रतन काका आए हुए हैं। दादाजी के साथ बातें कर रहे हैं। बिन्नू ने देखा, छप्पर से प्याला निकालकर रतन काका को चाय दी जा चुकी है। वह भीतर गया तो उसने देखा कि माँ रो नहीं रही लेकिन उदासी अभी भी बाकी है। उसने बहुत डरते हुए भूख लगने की बात कही तो तुरंत उसे थाली परोसकर दी। खाना खाकर वह बैठक

में आ गया। रतन काका जा चुके हैं। माँ ने उनका प्याला धोकर वापस छप्पर पर टाँग दिया है। सभी खाना खा चुके तो माँ सारे बर्तन पिछवाड़े रखकर अपने कमरे में चली गई। बिन्नू ने ध्यान रखा, माँ ने खाना नहीं खाया है। दादी ने दादाजी को पान बनाकर दिया और बोली, - "जो हुआ, अच्छा नहीं हुआ!"

- "हाँ!" कहकर दादाजी चुप हो गए।

- "क्या हाँ?" दादी गुस्से में आ गई, "तुम्हें कुछ करना चाहिए।"

- "क्या करूँ?" दादाजी भी सहसा गुस्से में आ गए, - "इतनी-सी बात पर घर से निकाल दूँ? बहू को नौंवा महीना चल रहा है। इतने दिनों से अलग सो रहा है। मर्द है। पकड़ लिया होगा हाथ!" दादाजी ने टालते हुए कहा।

दादी कुछ नहीं बोली। वापस पलटने लगीं तो दादाजी ने फिर रोका, - "बात को तूल मत दो। बहू को कहो, खुश रहे। पूरे दिनों में रोने-धोने से बच्चे पर बुरा असर पड़ता है।"

दादी ठिठक गई। फिर दादाजी की आँखों में देखते हुए बोली, - "खुश होना या रोना बहू के हाथ में है क्या? आदमी और मशीन में फरक होता है।"

दादाजी कुछ बोलते तब तक दादी चली गई। दादाजी के चेहरे पर झल्लाहट आ गई। बिन्नू थोड़ी दूर बैठा था। उसका सिर दादी की बात की सहमति में हिलने लगा। बिल्कुल सच्ची बात है। उसने कभी खुशी को माँ के हाथ में नहीं देखा। खुशी जब भी रहती है माँ के चेहरे पर रहती है और यह बात तो उसे एकदम ठीक से पता है कि आदमी और मशीन में फरक होता है। जब दादी ने बात इतनी सही बोली तो फिर दादाजी गुस्सा क्यों कर रहे है? एकदम आसान बात क्यों नहीं समझ रहे हैं? इसमें तो शुक्ला माट्साब की मदद की जरूरत भी नहीं है। खुद बिन्नू आसानी से समझ गया। लेकिन वह बोला कुछ नहीं। दादाजी सोने लगे तो वह भी अपने कमरे में आ गया।

दो दिन ऐसी ही खामोशी और तनाव में बीते। बिन्नू जिसे बता तो नहीं सकता है लेकिन उसे इस खामोशी से डर लगता है। तभी तीसरे दिन घर में खामोशी टूटी। मेहमान आने लगे। उसे पता चला, माँ की गोद भरी जाएगी। गाँव की औरतें आने लगी। दोपहर तक तो पूरा घर भर गया। गीत गाए जाने लगे। बिन्नू इस भीड़ में माँ के पास नहीं जा रहा है। तभी उसे जानकी बुआ और उषा दीदी नजर आई। बिन्नू को अचरज हुआ कि उषा दीदी का पेट तो उसकी जगह पर सही सलामत है। लेकिन सरला

तो कह रही थी शहर में गिरा आई है? बिन्नू ने ज्यादा दिमाग नहीं खपाया। सीधे उषा दीदी के पास पहुँचा।

- "कहाँ मिला ये?"

- "क्या कहाँ मिला?" उषा ने आश्चर्य से पूछा। सारी औरतें बिन्नू को देखने लगीं।

- "तुम्हारा पेट!" बिन्नू ने उसके पेट पर उँगली रखकर पूछा, - "तुम शहर में कहीं पेट गिरा आई थी न? फिर दुबारा कहाँ मिला?"

कमरे में सन्नाटा खिंच गया। उषा के चेहरे पर घबराहट, लज्जा और गुस्से का इतना मिला-जुला भाव था कि बिन्नू घबरा गया। उसने फिर जानकी बुआ को देखा तो वह समझ गया कुछ गड़बड़ हो गई है। जानकी बुआ का चेहरा गुस्से से तमतमा रहा है। उसने उषा का हाथ पकड़ा और चल दी। दादी दौड़कर आई और रोकने लगी तो उसने पलटकर नमस्कार की मुद्रा में इतनी जोर से हाथ जोड़े कि लगा वह ताली बजा रही है, फिर इतना ही कहा, - "अच्छा मान दिया घर बुलाकर, याद रखेंगे।" कहकर दोनों माँ-बेटी घर से बाहर। बिन्नू ने भी भाग निकलने में ही भलाई समझी।

काफी देर बाद जब वह लौटा तो सब कुछ सामान्य हो गया था। रात को खाने के बाद माँ ने उसे कमरे में समझाया, - "इस तरह की बातें नहीं करते। गाँव में रिश्ते-नाते खराब हो जाएँगे।"

- "मैंने क्या गलत कहा था?" बिन्नू ने पूछा।

- "तूने उषा दीदी से क्या कहा था? तू ही सोच, इस तरह कोई पेट कहीं गिरा सकता है क्या? शरीर से पेट अलग हो जाएगा तो आदमी मर नहीं जाएगा?" माँ ने उसे समझाया।

- "वही तो...!" बिन्नू उछल पड़ा, बोला, - "इतने दिनों से यही बात तो मैं सोच रहा था, पर उस दिन सरला कह रही थी उषा दीदी के पेट में पता नहीं किसका बीज था, पेट गिरा आई है।"

- "झूठ बोलती है।" माँ ने फिर समझाया।

- "तुम बिल्कुल ठीक कहती हो माँ।" बिन्नू ने संजीदगी से समर्थन दिया। बोला, - "पर सरला के पेट में किसका बीज है मुझे मालूम है!"

बिन्नू ने देखा, माँ का चेहरा उतर गया। माँ की हालत देखकर बिन्नू घबरा गया, वह जल्दी से बोला, - "किसी और का नहीं, मेरा बीज है उसके पेट में।"

माँ के चेहरे से गुस्सा कम हुआ और अचरज ने कब्जा कर लिया।

- "सच्ची कह रहा हूँ। विद्या की कसम! उस दिन बाबू ने मूँगफली के बीज दिए थे ना! सरला ने उसी में से निकालकर खाए थे।" बिन्नू ने विश्वास दिलाया।

माँ मुस्कराने लगी। बोली, - "तुझे अभी समझाया है मैंने। ऐसी बातें नहीं करते हैं। अब सो जा!" कहकर वह भी उसके पास लेट गई।

सुबह उसकी नींद देर से खुली। वह उठकर पिछवाड़े मंजन करने गया तो देखा, एक बूढ़ी औरत बर्तन माँज रही है। वह दौड़कर वापस रसोईघर में आया और पूछा तो दादी ने बताया, सरला की जगह यह रमई काकी काम करेगी।

- "क्यों?"

इसका जवाब किसी ने नहीं दिया, वह वापस पिछवाड़े आया। रमई काकी बर्तन माँजकर हाथ धो रही है। काला झुर्रीदार चेहरा। मुँह से सारे दाँत गायब। अधपके बाल। बिन्नू को रमई काकी जरा भी पसंद नहीं आई।

- "सरला अब काम क्यों नहीं करेगी?"

- "चाय पी और जल्दी से नहा ले!" दादी ने इतना भर कहा। वह कुछ नहीं बोला। चाय पीकर एकदम से नहाने नहीं गया। बैठक के पास वाले कमरे में जाकर दरी पर लेट गया।

फिर शाम तक उसका मन किसी बात में नहीं लगा। शाम को दोस्तों के साथ खेलने में वह सब कुछ भूल गया। जब घर लौटा तो उसे रोज की अपेक्षा ज्यादा थकान महसूस होने लगी।

सुबह जब सोकर उठा तो बदन बुखार से तप रहा था। पूरे बदन पर छोटे-छोटे लाल दाने उभर आए। बाबू उसे लेकर शहर के अस्पताल आए। डॉक्टर ने कहा 'चिकन पॉक्स' है। दवाइयाँ लिखकर दीं और इंजेक्शन लगाए। दोपहर तक घर लौटकर आए। दादी ने कहा, - "छोटी माता है।" अब डॉक्टर के इलाज के साथ 'बड़वादाजी' की झाड़-फूँक भी शुरू हो गई। देह पर उभर आए दानों की तकलीफ और बुखार की पीड़ा से बिन्नू निढाल हो गया। इससे भी ज्यादा पीड़ा इस बात की थी कि उसके घर से बाहर

निकलने पर पाबंदी लगा दी गई। दिनभर घर में बिस्तर पर पड़े-पड़े बिन्नू उदास रहने लगा। शंकर, प्रकाश और कमल एक दिन देखने आए, फिर उनके घर मना कर दिया तो फिर नहीं आए। चंदू, हरि और गोविंद आ नहीं सकते हैं। भीतर उसके कमरे में आना तो दूर, बैठक पार नहीं कर सकते हैं।

दो दिन बाद बिन्नू का धैर्य उसकी देह की तरह कमजोर हो गया। वह अधीर होकर गोविंद और हरि से मिलने की जिद करने लगा। तब घर में सभी को मालूम हुआ कि वह शाम को बाहर कहार और चमार के छोरों के साथ खेलता था। न केवल खेलता था बल्कि कहारों के साथ मछली पकड़ने जाता था। हरि के घर चमड़ा काटना सीखता था।

तो उनके घर पानी भी पिया होगा। कुछ खाया भी होगा?

घर में किसी ने पूछा नहीं, लेकिन सोचकर ही दहल गए। उसे खूब समझाया गया। उन लड़कों को घर में नहीं बुलाया जा सकता है। वे छोटी जाति के हैं। जितना समझाते, बिन्नू की जिद उतनी बढ़ती जाती। एक दिन उसे बहलाने के लिए बैठक में लाए। उसे ग्लूकोज घोलकर प्याले में पानी दिया, जो उसने पिया नहीं चुपचाप नीचे रख दिया। दादी ने कहानी सुनाने की कोशिश की। उसने सुनने से मना कर दिया। दादाजी ने समझाना चाहा, माँ मनुहार करने लगी लेकिन वह जिद पर अड़ गया। पैर पटकने लगा। बाबू को गुस्सा आ गया। कहने लगे, - "तुम लोगों ने इसे बहुत सिर चढ़ा रखा है, रोने दो।"

बिन्नू की जिद और बढ़ गई। उसे गुस्सा आ गया, - "हरि को या गोविंद को बुलाओ! अभी बुलाओ!"

- "कोई जरूरत नहीं उन लोगों की यहाँ। आगे से तेरा उनके साथ खेलने जाना भी बंद!" बाबू गुस्से में तमतमा गए।

- "मैं दवाई नहीं पियूँगा!" बिन्नू ने पहली बार गुस्से से बाबू को देखा।

- "कैसे नहीं पिएगा?" बाबू गुस्से में उसकी ओर बढ़े। उन्होंने उसका मुँह जबरन खोला और चम्मच भर दवाई उसके मुँह में डाल दी। हल्के से जरा नाक दबाई तो दवाई झट से बिन्नू के पेट में गई। कुढ़ गया बिन्नू।

- "सो जा चुपचाप अब!" बाबू गुस्से में बोले।

- "नहीं सोऊँगा। हरि और गोविंद को नहीं बुलाया तो देखना फिर...!" वह गुस्से में पैर पटकने लगा।

- "क्या देखना? क्या करेगा तू... बोल?" बाबू गुस्से में आगे बढ़े। शायद सरला कांड का दबा गुस्सा सतह पर आ गया। दादी ने आगे बढ़कर उसे रोका।

बिन्नू अपने गुस्से और जिद को लाचारी की तरफ जाने से रोकने के लिए बेचैन हो गया। सहसा वह उठा और छप्पर में टँगा रतन काका का प्याला लेकर आया और तख्त के पास रखा ग्लूकोज का पानी उसमें डालकर पीने लगा। कमरे में सभी स्तब्ध रह गए। काटो तो खून नहीं। फिर सबसे पहले बाबू सदमे से उबरे। गुस्से में आगे बढ़े तो तत्काल माँ ने आकर रोक दिया।

- "मार-कुटाई मत करो। हजार मंदिरों में माथा टेका तब नसीब हुआ है।" कहकर माँ ने उसे गोद में खींच लिया।

- "इसी लाड़-प्यार में बिगड़ रहा है। एक बार की मार हमेशा याद रहेगी।" बाबू अब गुस्से में माँ को घूरने लगे।

- "वह बिगड़ नहीं रहा है। दोस्ती करना चाहता है और वह भी चोरी-छुपे नहीं। यह तो ठीक बात है।" माँ ने शांत स्वर में जवाब दिया। बात का मर्म कहीं और था। बाबू गुस्से में थम गए।

माँ बिन्नू को देखते हुए बोली, - "उन लोगों के घर जाकर उनके साथ उठता-बैठता है। खाता-पिता भी होगा। जो पीठ पीछे या चोरी छिपे सही है तो यहाँ घर में भी सही है।"

बाबू गुस्से में पैर पटकते हुए बाहर चले गए, दादाजी चुपचाप अखबार उठाकर पढ़ने की कोशिश करने लगे। दादी आगे बढ़ी और लाड़ से उसके सिर पर हाथ फिराने लगी।

तभी दादी उसके पास से उठी और माँ के साथ उतरकर आँगन में आ गई। दादी तुलसी के पास रुककर धीरे-से गुनगुनाने लगी।

'देखण का बग उजळा

भीतर का मन काळा

हो गुरुजी... भीतर का मन काळा...!'

बिन्नू ने देखा, दादी की आँखें आसमान में कुछ टटोल रही हैं। उसे तो आसमान में एक भी बगुला नजर नहीं आया। हालाँकि उसे मालूम है कि बगुले उजले होते हैं लेकिन उनके मन काले होते हैं, ये पता नहीं था। दादी ने बगुलों के मन कब देखे? मन होता कैसा है? देह में कहाँ होता होगा? और दादी किस गुरुजी से प्रार्थना कर रही हैं। दादी का तो कोई गुरु नहीं है। शुक्ला माट्साब तो दादी से छोटे हैं और माँजी-माँजी कहते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि दादी किन बगुलों की बात कर रही हैं? उसने सोचा, दादी से पूछ लिया जाए, लेकिन अभी कुछ देर पहले घर में बहुत गर्मा-गर्मी हुई थी। सभी के गुस्से से घर में तपन बढ़ गई थी। ऐसे में पूछना ठीक रहेगा? पता नहीं कौन-सी बात गलत निकल जाए!

उसने देखा, दादी अभी भी गुनगुनाते हुए आसमान में देख रही हैं। बिन्नू ने देखा, आसमान में बादलों के दो छोटे टुकड़े हैं जिसमें से एक खरगोश बन गया है और दूसरा ठीक हिरन जैसा लग रहा है। दोनों बहुत धीरे-धीरे सरक रहे हैं। जबकि हिरन और खरगोश तो बहुत तेज दौड़ते हैं। कुछ देर उसने उनके भागने की प्रतीक्षा की फिर दौड़कर दादी के पास आ गया। दादी ने उसे करीब खींच लिया। माँ धूप में सूख रहे बड़ी और पापड़ समेटकर भीतर जाते हुए रुक गई और मुस्कराने लगी। वह खुश हो गया।

उसने देखा, शाम हो रही है। गरम दिन की तपन कम होने लगी है।